नागरी पत्रिका

वर्ष २४ | अंक १२ | मार्च १९९२ ई०

नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

मूल्य : रु० २-०० प्रति अंक

रु० २०-०० वार्षिक

संपादक : सुधाकर पांडेय

संपादक मंडल :

डॉ० लक्ष्मीशंकर व्यास, विश्वंभरनाथ द्विवेदी

डॉ० विजयपाल सिंह, डॉ० शितिकंठ मिश्र

डॉ० जितेंद्रनाथ पाठक, डॉ० मोहनलाल तिवारी

डॉ० शकुंतला शुक्ल

दिल्ली कार्यालय : डॉ० पद्माकर पांडे

१ ए, सुनहरीबाग रोड, नई दिल्ली।

१—संपादकीय १

२—सोनिया गांधी का पत्र २

३—'मैं समुद्र हूँ' कविता संग्रह का लोकार्पण ३

४—हिंदी में शास्त्र रचना के लिये ४

५—भारतीय पत्रकारिता खतरे में —सुधाकर पांडेय ५

६—स्वतंत्रता आंदोलन में हिंदी पत्रकारिता का योगदान —डा० शंकरदयाल शर्मा ६

७—अमृतलाल नागर को पढ़ते हुए —इंदु वशिष्ठ १७

८—व्यंग्य भाषा की गद्यलय —डॉ० बालेंदुशेखर तिवारी २२

९—कबीर की प्रासंगिकता —अर्चना उपाध्याय २७

१०—पद्मावत में शुक कथारूढ़ि एवं... —डॉ० इंदुरेखा सिंह २९

११—विशेष सूचना ३०

१२—सवान-ए-उमरी —चौ० गिरीशचंद ३१

१३—पुस्तक समीक्षा ३६

संपादकीय

डा० जगन्नाथ प्रसाद शर्मा का तिरोधान अभी हाल में ही हुआ है। वे आचार्य रामचंद्र शुक्ल और बाबू श्यामसुंदर दास के आदि शिष्यों में मौलिक महत्व के व्यक्ति थे। उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय से अपना जीवन आरंभ किया और अंततक वहीं बने रहे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपरांत वे काशीहिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष हुए तथा अपने गुरुओं की गद्दी को सुशोभित किया। शुक्ल कालीन आलोचकों में उनकी गौरव गरिमा अपने ढंग की मान की अधिकारिणी रही है। यद्यपि वे स्वतंत्रता संग्राम के सैनिक थे तथापि सामान्यतः भीड़ भाड़ से दूर रहकर बनारसी जीवन पद्धति ग्रहण कर एकांत आनंद में रुचि रखने वाले ऐसे व्यक्ति थे, जिनकी याद उन सबको सदा बनी रहेगी, जो उनके निकट रहे हैं।

वे यारों के यार, गंभीर बैठकबाज ऐसे विद्वान थे जिनकी सभी कृतियाँ समीक्षा जगत में समान रूप से आदृत

कबीर की प्रासंगिकता

—अर्चना उपाध्याय

कबीर मूलतः भक्त थे। काव्य-रचना और समाज-सुधार दोनों ही उनके लक्ष्य नहीं थे। किन्तु जब उनकी दृष्टि समाज में व्याप्त कुत्सित बुराइयों पर पड़ी तब उनका संवेदनशील हृदय कराह उठा। एक मानव द्वारा दूसरे मानव को मानवता के ही नाम पर पीड़ित करने का जो ताण्डव उन्होंने देखा वह वास्तव में अकल्पनीय था संपूर्ण समाज में अस्पृश्यता, अन्धविश्वास, आपसी द्वेष एवं बैमनस्य, सामाजिक तथा धार्मिक रूढ़ियाँ, आडम्बर जैसी विसंगतियाँ विस्तार पा चुकी थीं। कबीर ने इन विषमताओं के विरुद्ध क्रांति का सूत्र-पात कर दिया। उनके विचार तत्कालीन समाज में जितने उपयोगी थे, आधुनिक समाज में भी उतने ही नवीन तथा उपयोगी हैं। वस्तुतः देखा जाय तो कबीर का सामाजिक चिन्तन आज के सन्दर्भ में अधिक मूल्यवान हो गया है। कबीर का चिन्तन चिर-नवीन है।

कबीर ने सभी धर्मों के समन्वय पर बल दिया। उन्होंने हिन्दू धर्म, वैष्णव संप्रदाय, बौद्ध धर्म, इस्लाम धर्म, सूफी संप्रदाय को एक ही सूत्र में पिरोने का प्रयास किया। वे विभिन्न धर्मावलम्बियों को एक मात्र धर्म—मानव धर्म से जोड़ना चाहते थे। क्योंकि कबीर यह अच्छी तरह जानते थे कि यही वह धर्म है जिससे जुड़कर समस्त मानव का कल्याण हो सकता है। उनकी दृष्टि में राम और रहीम तो एक ही थे।

हमरे राम, रहीम, करीमा, केशव, अलह रामरति सोई।
बिसमिल मेलि बिसम्भर एकै और न दूजा कोई॥

कबीर ने मानव-मात्र में एकता स्थापित करने के उद्देश्य से जाति पांति का जोरदार खण्डन किया। जाति के आधार पर किसी को ऊंचा और किसी को नीचा बताना कबीर के लिए अत्यन्त पीड़ादायक था। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में समाज के इस कलंक को मिटाने की घोषणा की। वर्णाश्रम धर्म की मर्यादा के नाम पर होने वाले विभाजन को कबीर के हृदय ने कभी स्वीकार नहीं किया।

जो तू बांमन बंमनी जाया,
तो आन बाट ह्वै क्यों नहिं आया।
जो तू तुरक तुरकनी जाया,
तौ भीतर खतना क्यों न कराया॥

अस्पृश्यता समाज का कोढ़ था, और आज भी है। कबीर ने समाज के इस कोढ़ को जड़ से समाप्त करने पर बल दिया। कबीर ने ब्राह्मण तथा शूद्रों के मध्य की खाई को पाटने का एक महान स्वप्न देखा और उसे काफी हद तक साकार भी किया। उन्होंने एक ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें जाति के नाम पर ऊँच-नीच का विभाजन न हो। वे ब्राह्मणों से प्रश्न करते कि शूद्रों से तुम कैसे श्रेष्ठ हो—

काहे को कीजै पांडे छोटि बिचारा।
छोटहि ते उपजा संसारा॥
हमारैं कैसे लोहू तुम्हारे कैसे दूध।
तुम कैसे ब्राह्मन पांडे हम कैसे सूद॥

कबीर अहिंसा के प्रबल समर्थक थे। कबीर का मानना था कि इस संसार के सभी जीव, चाहे वह छोटा हो या बड़ा, ईश्वर द्वारा रचे गए हैं। इन जीवों के प्रति सभी को स्नेह तथा करुणा का भाव रखना चाहिए। कबीर को अहिंसा करने वाले वैष्णव अधिक प्रिय हैं। जीवों के प्रति हिंसा की भावना कबीर को असह्य और

अप्रिय था। उन्होंने मांस का सेवन करने वालों को कटु शब्दों में फटकारा--

काजी काज करौ तुम कैसा,
घर-घर जबह करावइ भैसा।
बकरी मुरगा किन फरमाया,
किसके हुकुम तुम छुरी चलाया।।

कबीर का विश्वास था कि मनुष्य की सबसे बड़ी निधि उसका चरित्र है। जिसके चरित्र में मानवीय गुणों का दर्शन सुलभ हो वही सच्चा मनुष्य है। सच्चरित्र व्यक्ति द्वारा ही मानवता के उपकार की संभावनाएं हैं। उन्होंने मानव को कपटपूर्ण आचरण का परित्याग कर हृदय में पवित्रता धारण करने के लिए प्रेरित किया। कबीर ने छल कपट रहित हृदय से सबसे मिलने का आग्रह किया।

साई या संसार में सबसे मिलिये धाय।
का जाने किस भेष में नारायन मिल जाय।।

अहंकार को भी कबीर ने सर्वथा अनुचित ठहराया। अहंकार मानवोचित गुणों के विनाश का कारण है। कबीर के अनुसार मनुष्य व्यर्थ के अहंकार में आकर मानवता से विमुख होने लगता है। फलस्वरूप वह समाज के लिए दुःख का कारण बनता है। अपनी क्षणिक उपलब्धियों के लिए अहंकार करना व्यर्थ ही है। कबीर ने अहंकारियों को चेतावनी देते हुए कहा--

ये गुन गर्व करहु अधिकाई,
अधिक गर्व न होय भलाई।
जासु नाम है गर्व प्रहारी,
सो कस गर्व सकै संहारी।।

कबीर ने व्यभिचार का विरोध किया। अनाचार, दुराचार, परस्त्री गमन जैसी दूषित वृत्तियों पर उन्होंने कुठाराघात किया। ये घिनौनी वृत्तियाँ आज भी हमारे समाज में ज्यों की त्यों उपस्थित हैं। घृणित कृत्यों की उन्होंने स्पष्ट शब्दों में भर्त्सना की--

पर नारी रोता फिरै, चोरी विढ़ता खांहि।
दिवस चारि सरसा रहै, अंति समूला जांहि।।

कबीर ने बाह्य आडम्बरों का वर्णन किया। उनके अनुसार शुद्ध अन्तःकरण से ईश्वर की आराधना करना ही समुचित है, बाह्याचारों द्वारा कोई लाभ नहीं है। सभी प्रकार के बाह्याचार छल मात्र है। कबीर ने इसका प्रतिकार कर सहज मानवीय जीवन-क्रम को ही उचित बताया। इन मिथ्या आडम्बरों की निन्दा करते हुए उन्होंने उद्घोष किया।

मूड़ मुड़ाये हरि मिलै, हर कोई ले मुड़ाय।
बार-बार के मूड़ ते, भेड़ बैकुण्ठ न जाय।।

कबीर का धर्म, भक्ति, मार्ग और लक्ष्य सभी कुछ प्रेम था। कबीर का यह प्रेम अत्यन्त विस्तृत था। परमात्मा तथा आत्मा दोनों ही इस प्रेम की परिधि में समा जाते थे। आत्मा के प्रति उनके प्रेम में मानवता की पुकार सर्वोपरि है। ईश्वर में अटूट विश्वास के कारण नर में नारायण की प्रतीति ने उन्हें मानवतावाद की ओर उन्मुख किया था। कबीर ने अपनी ओजपूर्ण वाणी में जो बात शताब्दियों पहले कही थी उसकी उपयोगिता आज भी कम नहीं हुई है। उनकी नवीनता उसी तरह बनी हुई है। यदि देखा जाय तो कबीर के विचार वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अधिक मूल्यवान हो गए हैं। आज अस्पृश्यता, अन्धविश्वास, छल-कपट दिखावा, झूठ इत्यादि संपूर्ण समाज पर अपना बंधन कसता जा रहा है। मानव-मानव के बीच की दूरी बढ़ रही है। धर्म तथा संप्रदाय के नाम पर विनाश का हृदय विदारक खेल खेला जा रहा है। ये कुरीतियां मनुष्य तथा समाज के उन्नति की सबसे बड़ी बाधायें हैं।

आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य कबीर द्वारा प्रशस्त किए गए मार्ग का अनुकरण करे। यदि मानव कबीर के दिखाए मार्ग पर चल सके तो उसका जीवन किसी सीमा तक सुखद हो सकता है।